International Journal of Applied Research 2015; 1(7): 679-682

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2015; 1(7): 679-682
www.allresearchjournal.com
Received: 04-04-2015
Accepted: 07-05-2015

डॉ॰ किरण ग्रोवर
एसो॰ प्रो॰,स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग,
डी॰ए॰वी॰ कॉलेज, अबोहर।

Correspondence:
डॉ॰ किरण ग्रोवर
एसो॰ प्रो॰,स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग,
डी॰ए॰वी॰ कॉलेज, अबोहर।

विमर्शमूलक वैचारिक मन्थन की परिणति : सुरेन्द्र वर्मा का 'मुझे चाँद चाहिए'

डॉ॰ किरण ग्रोवर

सारांशः– सच्चा साहित्यकार वैयक्तिकता को निर्वैयक्तिकता में परिणित करके साहित्य को सार्वकालिक,सार्वदेशिक व सार्वभौमिक बनाकर पाठकों को मंत्रमुग्ध करता है। साहित्य के सन्दर्भ में विमर्शवादी वैचारिक मन्थन की संकल्पना आधुनिक काल की देन है। विमर्श ही समकालीन उपन्यासों की शक्ति है। आधुनिक काल में विमर्शवादी अवधारणा के अन्तर्गत उत्तर आधुनिक विमर्श, स्त्री विमर्श, झुग्गी झोंपड़ी विमर्श, आदिवासी विमर्श, अल्पसंख्यक विमर्श, सत्ता विमर्श, शिक्षा विमर्श, सेक्स विमर्श, श्रमिक विमर्श, बाज़ार विमर्श आदि का समकालीन उपन्यासों में विश्लेषण किया गया है। उपन्यास साहित्य के सन्दर्भ में सुरेन्द्र वर्मा जी का योगदान अविस्मरणीय है जिन्होंने 'मुझे चाँद चाहिए' उपन्यास में यथार्थधर्मिता के धरातल पर अनुद्घाटित आयामों को खोलकर अपनी विचारधारा को प्रस्तुत किया है। वैध व अवैध,न कोई लेना न देना, कुँआरी होकर मातृत्व स्वीकार करना उत्तर आधुनिकता के लक्षणों पर विचार चिन्तन किया है। वर्षा के संवाद स्त्री विमर्श की शक्ति हैं जोकि अस्तित्व बोध को प्रस्तुत करती है। प्रशिक्षक रामदेव का कथन हर्ष के जरिए वर्तमान पीढ़ी के व्यवहार को रेखांकित करता है जो विखंडनवादी बनती जा रही है। पारिवारिक रिश्ते नाते में पनपती विघटन की स्थिति,महादेव का बहन के व्यवहार के प्रति आक्रोश विघटनकारी मानसिकता का परिचय देता है। प्रेमी के साथ तन्मयता से दैहिक सुख की प्राप्ति व अभिव्यक्ति का सहजता से प्रकटीकरण सैक्स विषयक चिन्तन को सहज बनाने का प्रयास प्रतीत होता है। चतुर्भुज के कथन में असुरक्षा व आश्रयहीनता, बेबसी व चालाकी का भाव झलकता है।

बीज शब्दः सुरेन्द्र वर्मा, 'मुझे चाँद चाहिए, विमर्शवादी अवधारणा, विघटन, उत्तर आधुनिक विमर्श, विखंडन।

मूल प्रतिपादनः– गुणात्मक साहित्य वही होता है जो अपने भीतर बाहर सार्वभौमिक मूल्यों, सन्देशों व उद्देश्यों को समाहित किये रखता है क्योंकि साहित्य सार्वकालिक, सार्वदेशिक व सार्वभौमिक होता है। सच्चा साहित्यकार अपनी वैयक्तिकता को पिघला कर उसे समाजीकृत रूप में प्रस्तुत करता है। वैयक्तिकता को निर्वैयक्तिकता में परिणित करना ही कला है जो पाठकों को मुत्रमुग्ध करती है। समय के सच को उजागर करने के साथ गुणात्मक साहित्य सदैव प्रासंगिक रहता है तथा जन मानस को आलोक प्रदान करने के साथ दिशा निर्देश भी देता है। साहित्य में 1960 के बाद विमर्श की अवधारणा दृष्टिगत होती है। साहित्य के सन्दर्भ में विमर्शमूलक वैचारिक चिन्तन की संकल्पना आधुनिक काल की देन है।

वर्तमान में जब साहित्य परिचर्चा होती है तो 'विमर्श' शब्द स्वतः बहस के केन्द्र में आ जाता है। शब्द प्रयोग की दृष्टि से 'विमर्श' शब्द अत्यन्त प्राचीन है।'विमर्श' का अर्थ है–सोच विचार कर तथ्य या वास्तविकता का पता लगाना, किसी बात या विषय पर कुछ सोचना, समझना, विचार करना, गुण–दोष आदि की आलोचना या मीमांसा करना, जांचना और परखना, किसी से परामर्श या सलाह करना, ज्ञान।[1] विमर्श' शब्द अत्यंत व्यापक है, जिसकी उत्पत्ति मृश् धातु में वि–उपसर्ग तथा घञ् प्रत्यय लगाकर हुई है। अतः 'विमर्श' शब्द का व्युत्पत्तिपरक अर्थ विचार–विमर्श, सोचना, समझना, आलोचना करना है। नालन्दा विशाल शब्द सागर में विमर्श को, "किसी बात का विचार या विवेचन, आलोचना, समीक्षा, परीक्षा, परखने का काम परामर्श, सलाह, अधीरता, असंतोष।"[2] के अर्थ में लिखा गया है। मानक अंग्रेजी हिन्दी कोश में 'डेलीबरेट' का अर्थ, सुचिंतित, जानबूझकर किया गया, इरादे के साथ, विचारपूर्वक सोद्देश्य, निश्चित और सुचिंतित बताए गये इसके अन्य अर्थ सचेत, चौंकना, सावधान, विवेकशील, सोच–समझकर फैसला करने वाला, बताए हैं[3] अर्थात, विमर्श का अर्थ सलाह करना, बहस करना, विचार–विमर्श, सोच–विचार, सलाह–मंत्रणा, वाद–विवाद, धीरता सतर्कता है।

विमर्श शब्द सोच विचार, विचार–विनिमय,चिन्तन मनन को द्योतित करता है। वास्तव में किसी विषय विशेष के सन्दर्भ में गंभीरता से चिन्तन, मनन, विवेचन,विचार विनिमय व सोच विचार करना विमर्श कहलाता है। विमर्श ही समकालीन उपन्यासों की शक्ति है। विगत दो दशकों से विमर्श की संकल्पना साहित्य मीमांसा में प्रयुक्त हो रही है। विविध विमर्शमूलक विचारों का अंकन हिन्दी के समकालीन उपन्यासों में विस्तार से हुआ है।[4] आधुनिक काल में विमर्शवादी अवधारणा के अन्तर्गत उत्तर आधुनिक विमर्श, स्त्री विमर्श, झुग्गी झोंपड़ी विमर्श, आदिवासी विमर्श, अल्पसंख्यक विमर्श, सत्ता

विमर्श, शिक्षा विमर्श, सेक्स विमर्श, श्रमिक विमर्श, बाज़ार विमर्श, पंजाबी संस्कृति विमर्श आदि का समकालीन उपन्यासों में विश्लेषण किया गया है।

हिन्दी साहित्य के कथाकारों की सशक्त पीढ़ी है जिन्होंने अपने रचना संसार को विविध विमर्शमूलक वैचारिक मन्थन से मथा है। उपन्यास साहित्य के सन्दर्भ में सुरेन्द्र वर्मा जी का योगदान अविस्मरणीय है जिन्होंने यथार्थधर्मिता के धरातल पर अनुद्घाटित आयामों को खोलकर अपनी विचारधारा को पाठकों के समक्ष सम्प्रेषित किया है। सुरेन्द्र वर्मा भारतीय परम्परा से विषय वस्तु का चयन करके उसको आधुनिक समाज के अनुकूल प्रस्तुत करते हैं। उन्होंने पौराणिक सन्दर्भ, परिवेश, पात्र आदि के माध्यम से अपनी दक्षता प्रमाणित की है।वर्मा जी ने हिन्दी साहित्य की तमाम विधाओं को अपनी प्रतिभा से सम्पन्न किया है। उनकी रचनाओं के भाषिक प्रयोग वर्मा जी की साहित्यिक संवेदना की निजी विशेषता है। 'अंधेरे से परे','मुझे चाँद चाहिए','दो मुर्दो के लिए गुलदस्ता' उनके प्रतिष्ठित उपन्यास हैं ,इन में से 'मुझे चाँद चाहिए' केन्द्रीय साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत है। 'मुझे चाँद चाहिए' उपन्यास के अन्तर्गत भूमण्डलीकरण के परिप्रेक्ष्य में कला क्षेत्र पर मजबूत होने वाले बाज़ार तंत्र को उजागर करने का प्रयास किया है। अस्तित्ववादी संहिता के साथ बाज़ारवादी पूंजी संहिता आक्रमण कलाकार के संघर्ष के रूप में प्रकट हुआ है। सूचना प्रौद्योगिकी एवम् बहुराष्टीय निगम का अद्भुत समीकरण चित्रनगरी के परिवेश में प्रकट होता है। भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया का परिणाम अपनी संस्कृति की ओर वापिस जाना होगा, यही इस उपन्यास की चरम परिणति है।

सुरेन्द्र वर्मा जी ने जीवन की उन समस्याओं को रेखांकित किया है जो गहन यथार्थ बोध के साथ भावनाओं के सहज उच्छ्लन, मानसिक अन्तर्द्वन्द्व का शमन करके संवेदनात्मक धरातल का संस्पर्श करती हैं।सुरेन्द्र वर्मा जी ने विमर्शवादी अवधारणा के अन्तर्गत उत्तर आधुनिक विमर्श,स्त्री विमर्श, विघटन विमर्श, विखंडन विमर्श, सेक्स विमर्श, सर्वहारा विमर्श का प्रभावशाली चिन्तन अपने 'मुझे चाँद चाहिए' उपन्यास में किया है जिसका विवेचन इस प्रकार है–

उत्तर आधुनिक विमर्शः– उत्तर आधुनिक विमर्श मूलतः 20 वीं शती के उत्तरार्द्ध की देन है। उत्तर आधुनिकतावाद पूर्वाधुनिक व आधुनिक दोनों तरह की अवधारणाओं को चुनौती देता है व विखंडित भी करता है। वह इनके द्वारा कमाए गए सत्यों को समस्यापूर्ण बनाता है। समस्यापूर्ण बनाना ही सिद्धान्त की उत्तर आधुनिकता है। ल्योतार उत्तर आधुनिकता को आधुनिकता का ही विस्तार मानते हैं। रंडेल के मत में उत्तर आधुनिक क्षण एक साथ समझौते का क्षण है व एक साथ संघर्ष का क्षण है।[5] उत्तर आधुनिकता के सूचना निर्मित सम्बन्ध सन्दर्भों और सम्बन्धों की उत्तर आधुनिक के सम्बन्ध व्यावहारिक होते हैं,सभंग होते हैं, विपद्ग्रस्त होते हैं, असुधार्य होते हैं, विडम्बनात्मक होते हैं। व्यावहारिकता उत्तर आधुनिक सम्बन्धों का सार है। उत्तर आधुनिकता के विषय में राघवेन्द्र प्रताप सिंह जी ने लिखा है कि उत्तर आधुनिकता किसी एक दार्शनिक के प्रति नहीं बल्कि सम्पूर्ण आधुनिक यूरोपीय दर्शन के प्रति तीव्र प्रतिक्रिया है। उत्तर आधुनिकता के लक्षण के रूप में अतियथार्थता, बिखराव, टूटन, विखंडन, विघटन, आधा अधूरापन, विकास तथा विनाश, कुँआरा मातृत्व, अनिश्चितता, आत्मनिर्भरता, अजनबीपन, अपूर्णता आदि को रेखांकित किया जाता है। उत्तर आधुनिकता भले ही भारतीय सभ्यता व संस्कृति की विचारधारा नहीं है किन्तु हमारे समाज के अनुरूप न होने पर भी पश्चिम में स्थित इसकी जड़ें अपनी शाखाओं का फैलाव हम तक पहुंचा रहें हैं।[6] 20 वीं शती के अन्तिम दो दशकों में उत्तर आधुनिक विमर्श को हमारे उपन्यासों में अभिव्यक्ति मिली।

वैध व अवैध,न कोई लेना न देना उत्तर आधुनिकता के लक्षण हैं। कुआँरी होकर मातृत्व स्वीकार करना उत्तर आधुनिकता के लक्षण हैं। सुरेन्द्र वर्मा जी के 'मुझे चाँद चाहिए' उपन्यास की पात्रा वर्षा न केवल हर्ष से प्रेम करती है अपितु हर्ष के साथ पति पत्नी के सम्बन्धों का रूपांकन भी होता है। वर्षा कुँआरी होकर मातृत्व स्वीकार करती हुई हर्ष की मौत के बाद उसके बच्चे को जन्म भी देती हैः'' मैं हर्ष के बच्चे को स्वीकार करूंगी। अनेक झंझावातों से गुजरने के बाद हर्ष के साथ दृढ़ स्थायी सम्बन्ध स्थापित हुआ।'[7]

उत्तर आधुनिकता विचारधारा के मूल में वर्षा कुँआरी होकर माँ बनना चाहती है।प्रेमी के बच्चे का ठाठ बाठ से पोषण करती है। पत्नी बने बिना जननी बन जाती है। सुरेन्द्र वर्मा जी के 'मुझे चाँद चाहिए' उपन्यास की पात्रा वर्षा ने मुस्कान से सहमति प्रकट की तथा मोह भरे कौतुक से बच्चे को देखती रही। अब वह सम्पूर्ण स्त्री बन गई। –प्रसव के बाद बच्चा जब पहली बार उसके बगल में लिटाया गया तो शिशु को देखने की ललक के बाद वर्षा की दूसरी चाह हुई थी –काश आज हर्ष होता ।'[8]

स्त्री विमर्शः– शोषण व दमन के प्रति स्त्री चेतना ने स्त्री विमर्श को जन्म दिया। स्त्री विमर्श वास्तव में आत्म चेतना, आत्म सम्मान, आत्म गौरव, समता व समानाधिकार की पहल का नाम है। स्त्री विमर्श स्त्री की अस्मिता का, आत्म–चेतना का,अन्याय के विरोध का ,अस्तित्व बोध का, और उसकी अत्याचार के विरोध में खडे रहने की लड़ाकू वृत्ति का न केवल परिचय देता है अपितु स्त्री चिन्तन को बल प्रदान करता है। वर्तमान नारी आर्थिक रूप से स्वयंपूर्ण बनती जा रही है। आत्मगौरव, अस्तित्व बोध, आत्म चेतना, आत्म निर्भरता ने नारी को आत्मविश्वस्त व सशक्त बना दिया है।[9] स्व के प्रति सजगता व अस्तित्व की चेतना स्त्री विमर्श की मुख्य शक्ति है जो हिन्दी उपन्यासों में पर्याप्त मात्रा में लक्षित होती ह जहां मैं की चिन्ता का अहसास होता है वहां स्त्री विमर्श का प्रारम्भ होता है। नारी अन्याय के विरुद्ध आवाज़ उठाने लगी , अब वह कड़वा सच उगलने लगी। पुरूष अगर पत्नी का त्याग कर दूसरी शादी रचाने लगा तो नारी में भी यह विचार पनपने लगा। आत्मनिर्भरता की हिदायत स्त्री विमर्श का अभिन्न अंग है। वर्तमान नारी व्यावहारिक बनती जा रही है –वैचारिक मतभेद होने पर वह पति का त्याग भी करने लगी है।परम्परागत मान्यताएं,रूढ़ियां पुरूषप्रधान समाज में होने वाला अन्याय व अत्याचार के खिलाफ़ कदम उठाने का साहस करने लगी है। समाज में सचेतन नारी के प्रति दकियानूसी दृष्टि रही है। आज़ादी नारी के आत्मनिर्भर होने पर निर्भर करती है। 'मुझे चाँद चाहिए' उपन्यास की पात्रा वर्षा विवाह करने की अपने भाई की सलाह को ठुकराती हैं। आर्थिक दृष्टि से वर्षा स्वयंपूर्ण बनना चाहती है। अपात्र जीवन साथी को ढोना वर्षा को अमान्य है। वे अपने भाई को कहती हैं–''आयु के जिस मोड़ पर मैं खड़ी हूं, शादी मुझे उतने महत्व की नहीं लगती, जितना पांवों पर खड़ा होना लगता है। कुपात्र के साथ बंधने से अपने पांवों पर खड़ा रहना अच्छा है।''[10] वर्षा का यह कथन स्त्री विमर्श का केन्द्रीय भाव रेखांकित करता है।

इस उपन्यास की पात्रा वर्षा अपने जीवन में कला को अन्तिम ध्येय मानती हैं।वर्धन परिवार का रिश्ता जब वर्षा के लिए आता है तब अनेक कारणों यथा भावी पति के तबादला होने की समस्या, 14 बटा 14 के कमरे में स्वतंत्रता गंवाने की समस्या, पत्नी व पुत्रवधू जैसी दोहरी भूमिका निभाने की समस्या,मां का दायित्व, अपने प्रेमी के दबंग व्यक्तित्व का उसके व्यक्तित्व पर हावी होना, मत वैभिन्नय का उत्पन्न होना आदि से मन ही मन रिश्ते को इन्कार कर देती हैं 'कुछ समय बाद मां की भूमिका का जुड़ना भी अनिवार्य था । तब समय का विभाजन और तीखा व तनाव भरा होगा। अन्तिम कारण हर्ष की उसके उपर हावी होने की प्रवृति थी। अब वे एक दूसरे के निकट आए थे, पर दूसरे स्वर पर विरोधी विचारों की नोंकें चुभने लगी थी।[11] वर्षा का यह कथन स्त्री विमर्श की शक्ति है जो अस्तित्व बोध को प्रस्तुत करती है।

नारी आर्थिक दृष्टि से स्वयंपूर्ण बनना चाहती है। वह पुरुष के आश्रित नहीं रहना चाहती अपितु अपने जीवन के सम्बन्ध में अनेक निर्णय स्वयं लेना चाहती है।पत्नी बनें बिना मातृत्व स्वीकार करती हैं। वर्षा ने कुँआरी होते हुए मां बनने का फैसला लिया तो सुजाता ने बच्चों की परवरिश में परिवार वालों के साथ के लिए इन्कार किया। सुजाता के फैसले का वर्षा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता क्योंकि वर्षा बच्चों के पालन पोषण का दम खम रखती है– वर्षा सुजाता से कहती हैं–''आपसे मदद मांगी है किसने। मैं जैसी दीन हीन पैदा हुई मेरा बच्चा वैसा पैदा नहीं होगा। वह अपनी मां के घर में मुंह में चांदी के चम्मच के साथ पैदा होगा।''[12] आत्मनिर्भर नारी कुँआरी होते हुए न केवल बच्चे को जन्म देना चाहती है अपितु बच्चे की परवरिश का भी दमखम रखती है जोकि स्त्री विमर्श का विवादास्पद पहलू है जो सामाजिक स्वास्थ्य के समक्ष प्रश्न चिह्न उपस्थित करता है। विजय बहादुर सिंह जी ने इस उपन्यास में अभिव्यक्त नारी चेतना पर टिपण्णी भी की है–'यह उपन्यास उन स्त्रियों का है जो पुरुष वर्चस्वी व्यवस्था के प्रति सिरे से असहमत हैं और लड़ झगड़कर उस स्वत्व को पा लेना चाहती हैं,जो सदियों से लावे की तरह उनके भीतर धधक रहा है। यह उपन्यास उस 'लावे' के बाहर आने की एक कहानी है।' इस उपन्यास में नारी के अस्तित्व एवम् अस्मिता की पुनर्व्याख्या हुई है।

विखंडन विमर्श– विखंडन एक भाव है जिसमें सकारात्मकता की अपेक्षा नकारात्मकता निहित होती है। यह एक ऐसी संकल्पना है जिसमें जोड़ने की अपेक्षा जोड़ने, विभक्त करने, बंटवारा करने तथा अस्वीकृत करने का भाव संभावित रहता है। विखंडन शब्द नकारात्मक सोच,विचार व व्यवहार का द्योतक है जिसमें रचनात्मकता व मानसिकता निहित होती है। वर्तमान जटिल परिवेश के कारण विखंडनवादी विचार उभरने लगा है। पात्रों के आचरण व व्यवहार को ले कर जो विचार चिन्तन प्रस्तुत हो रहा है वही विखंडन विमर्श के नाम से जाना जाता है।[13]वस्तुतः मनुष्य के आचरणगत व्यवहार का ही नाम साहित्य है।समकालीन उपन्यासों में विखंडन की प्रवृत्ति अपूर्व रूप में दिखाई देती है। अपमान, अभाव, अप्रेम, अव्यवस्था, उपेक्षा, सता, हिंसा, कुसंग आदि मनुष्य के आचरणगत व्यवहार के अंग बन चुके हैं। साहित्य में मन, विचार व दर्शन से प्रभावित होकर उपन्यासों में विनाशकारी मानसिकता के दर्शन होते हैं। विखंडनवादी मानसिकता पर करारा व्यंग्य उपन्यास का मूल स्वर है। सामाजिक माहौल को बिगाड़ने की मानसिकता ही विखंडित मानसिकता है। यह मानसिकता ही कभी कभी व्यक्तिगत जीवन की कुंठाओं के कारण उभरती है। समकालीन परिवेश ध्वंसकारी मानसिकता को ही नहीं अपितु अजनबीपन व अलगाव को भी जन्म देती है। क्रोध, स्वार्थ पूर्ति के लिए स्पर्धा, जातिवादी मानसिकता, अव्यवस्था, बिगड़ैल व फिल्मी माहौल विखंडन का हा अंश है।सता व अधिकार की अति होना आदमी को विखंडित मानसिकता की स्थिति तक पहुंचा देता है। कुसंगति के परिणामस्वरूप व्यक्ति विखंडित मानसिकता का शिकार बन जाता है।स्वार्थ व लालच भी व्यक्ति के विखंडित होने के एकमेव कारण हैं।

वर्षा वसिश्ठ का प्रेमी हर्ष व्यसनों का शिकार हो जाता है।हर्ष के व्यवहार में विखंडनवादी प्रवृति दृष्टिगत होती है।फिल्म एकटर का कोर्स पूरा करके आए हर्ष से वर्षा से मिलने जाती है तो रामदेव नामक प्रशिक्षक हर्ष की ज्ञात सच्चाई को निम्न शब्दों में प्रकट करता है–'' किसी तरह निभा रहा हूं । राम राम करके यह बैच निकल जाएं। सुबह नौ बजे से हमारी क्लास शुरु होती है। परसों साढ़े आठ बजे से उन्हें जगाना शुरु किया। साढ़े आठ बजे उठने लायक हुए।दिन रात तो उनकी टिप चलती है। क्लासों के बीच मुझे धुकधुकी लगी रहती है कि पता नहीं कब यह लुढ़क जाए। जहां तक पैसे का सवाल है –सड़कों तक से उधार लै रखा है बल्कि एक एक दो ड्रग्स की आदत लगाए दे रहै है।''[14] प्रशिक्षक रामदेव का कथन हर्ष के जरिए वर्तमान पीढ़ी के व्यवहार को रेखांकित करता है जो विखंडनवादी बनती जा रही है।

विघटन विमर्श:– विघटन विमर्श आधुनिक काल के चिन्तन का विषय है। विघटन की स्थितियां इसी कालखण्ड का सूचक हैं।विघटन के कारणों पर प्रकाश डालते हुए नीरज जैन जी ने लिखा है:–'' आधुनिक सभ्यता व ज्ञान विज्ञान के प्रसार ने मनुष्य में अतिशय भौतिकतावादी दृष्टि ही प्रसार नहीं किया अपितु उनके मूल्यों को भी विघटित करके रखा है।''[15] विघटन मूलतः एक वृति एवम् स्थिति का नाम है। विघटन में मूलतःपृथक्ता, भ्रष्टता व विनाशता निहित होती है। विघटन में पार्थक्य, बिखराव, टूटन, बर्बादी आदि विषयक सोच विचार व चिन्तन होता है। मानव जाति के विकास के लिए विघटनकारी मानसिकता एक बहुत बड़ा अवरोध है।वर्तमान परिवेश में व्यक्ति, परिवार व समाज के स्तर पर विघटन की स्थिति दृष्टिगत होती है।अति बौद्धिकता अहंकार को जन्म देती है जिससे विघटन की स्थिति उत्पन्न होती है।प्रशासकीय अधिकारी नैतिक मूल्यों को तिलांजलि दे कर घूस ले कर काम करने लगे हैं।मनुष्य का स्वभाव व जीवन व्यवहार कभी कभी पशुता को मात देता है।नियमों, परम्पराओं ,सिद्धान्तों , मूल्यों को तिलांजलि देने पर मनुष्य व्यथित हो जाता है।विघटन के अनेक पहलू यथा स्वार्थ, घूस, स्वभावगत भिन्नता, स्वयं निर्णय, अहम्, अति बौद्धिकता के परिवेश ने पनप रहे हैं। 'मुझे चाँद चाहिए' उपन्यास की नायिका मध्यवर्गीय परिवार के विरोधों अवरोधों को ध्वस्त कर देती है।फिल्म नाटक में बखूबी भाग लेती है तथा प्रेमी हर्ष से सम्बन्ध भी रखती है। मध्यवर्गीय परिवार की लड़की इस तरह के व्यवहार से परिवार वालों के लिए चिन्ता का विषय बन जाती है।महादेव वर्षा से कहता है कि ''यशोदा या तो तू कुएं में कूद जा या हम सब को जहर दे दें''[16] महादेव का बहन के व्यवहार के प्रति आक्रोश विघटनकारी मानसिकता का परिचय देता है।

वर्षा परिवार वालों के विरोध के बावजूद अभिनय कला सीखने के लिए दिल्ली के विद्यालय में रहती है।वह छुट्टियों में भी घर नहीं जाना चाहती तथा उसे भाई से भी यह सुनना पड़ता है–'' बड़े शहर की आज़ादी ने तुम्हारी सनक को पागलपन में बदल दिया है। तुम जहाँ जा रही हो , वह पतन व निराशा का रास्ता है। एक दिन तुम्हें पछतावा होगा, पर तब तक बहुत देर हो चुकी होगी।''[17] प्रस्तुत कथन पारिवारिक रिश्ते नाते में पनपती विघटन की स्थिति का परिचायक है।

वर्षा के व्यावहारिक खुलेपन को ले कर परिवार में हंगामा होता है। वह जीजी के पूछने पर बताती है–''किसलिए जाउं घर। किसके जिए जाउं। दीवारों से सर फोड़ने के लिए या गसुलखाने में बन्द किये जाने के लिए।''[18] वर्षा के संवाद से उसके विचारों व परिवार वालों की मानसिकता तथा विघटनकारी स्थितियों का परिचय मिलता है। इस उपन्यास में पारिवारिक, नैतिक व मूल्य विषयक विघटन का यथार्थ उभरता है।

सैक्स विमर्श:–सैक्स मानव जीवन की सहज प्रवृत्ति है। शास्त्रों ने चार पुरुषार्थों में से 'काम' को एक पुरुषार्थ के रूप में स्वीकार किया है। वस्तुतः भारतीय साहित्य एवं शिल्प कला में काम को ले कर पर्याप्त मात्रा में अभिव्यक्ति मिलती है। स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में सैक्स को ले कर पर्याप्त मात्रा में विचार चिन्तन होने लगा। शिक्षा का प्रचार, पश्चिमी सभ्यता और संस्कृति से बढ़ते हुए सम्बन्धों के कारण सैक्स जैसा विषय अब अभिव्यक्ति के लिए सहज रूप में स्वीकृत होने लगा है।सैक्स नई पीढ़ी को नई सोच के लिए प्रवृत्त करता है। समकालीन हिन्दी उपन्यासकार सैक्स विषयक घटनाओं, प्रसंगों, समस्याओं व तद्विषयक विचार चिन्तन को ले कर बेबाक लेखन कर रहा है। आज की नारी को भोग व विलास की वस्तु बन कर रहना स्वीकार्य नहीं।[19] अनमेल जीवन साथी के कारण दाम्पत्य जीवन में तनाव की स्थिति पैदा हो जाती

है। वर्तमान कालीन समाज व्यवस्था में न केवल पुरुषों में अपितु स्त्रियों में भी सैक्स को ले कर खुलापन पनपता जा रही है। सैक्स अपराध को और गुनहगारी को भी जन्म देता है। उदारीकरण, निजीकरण व वैश्वीकरण के माहौल में सैक्स को लेकर बाजारूपन उभर रहा है। आधुनिक परिवेश ने सैक्स को एक ओर बाजारू बना दिया है तो दूसरी ओर परम्परागत रूढ़ियों से लड़ने का हथियार भी। यौन सम्बन्ध को सहज होकर प्रकट करने का साहस कुँआरी लड़कियों में बढ़ रहा है। इस उपन्यास की पात्रा वर्षा अपनी सहेली दिव्या कात्याल को पत्र द्वारा अपने यौन सम्बन्ध के बारे में लिखती हैः—''निष्ठुर ने रति रंग के लिए अपना घर व राष्ट्रीय पर्व चुना, जब भारतीय गणतंत्र का संविधान लागू हुआ था,जब राजपथपर तोपें राष्ट्रपति को सलामी दे रही थी ,तब हठी प्रेमी मेरे काकैलना पर नखरेखा अंकित कर रहा था, मेरे तन मन की शान्ति राष्ट्रीय चेतना के इतिहास के साथ गुंथी जा रही थी।''[20] काम वासना हेतु मनोनुकूल साथी का चयन वर्षा की दृष्टि में तन मन की क्रान्ति का स्वरूप ग्रहण करता है।

वस्तुतः दैहिक सुख की प्राप्ति काम तुष्टि की मूल वृति है। प्रेमी के साथ तन्मयता से दैहिक सुख की प्राप्ति व अभिव्यक्ति का सहजता से प्रकटीकरण सैक्स विषयक चिन्तन को सहज बनाने का प्रयास प्रतीत होता है।वर्षा हर्ष के साथ यौन सम्बन्ध का सहज अंकन करती हैः—''अपने वक्ष पर हर्ष के नग्न सीने का स्पर्श हुआ तो सिलबिल का गला सूखने लगा। हर्ष की पीठ पर उसकी हथेलियों का दवाब अपने आप बढ़ने लगा।''[21] इस कथन से स्पष्ट होता है कि सैक्स विषयक सम्बन्धों की अभिव्यक्ति में सहजता की प्रवृत्ति उभर रही है।

सर्वहारा विमर्शः— सर्वहारा वह होता हे जो इपना सब कुद गंवा चुका हैं वस्तुतः समाज का वह परम निर्मम, अकिंचन वर्ग ही सर्वहारा वर्ग है। सर्वहारा विमर्श मूलतः आधुनिक संकल्पना है। जिसमें सर्वहारा व्यक्ति या समाज का विचार चिन्तन व विवेचन व विश्लेषण होता है अर्थात् जिसमें कंगाल व गरीबतम व्यक्ति या समाज का गंभीरतापूर्वकविचार चिन्तन होता है, वही सर्वहारा विमर्श है। सर्वहारा वर्ग की सही पहचान उसकी पीड़ा है। ऐसा वर्ग जो बर्बादी, दुख, व्यथा, करुणा से युक्त जीवन जीता है।[22]सर्वहारा वर्ग की नियति है कि उसका मौन व मूक रहना। सर्वहारा वर्ग को दो जून रोटी के लिए तड़पना पड़ता है। भूखों रहने की नौबत इसी वर्ग को आती है। सर्वहारा समाज अन्याय का शिकार बन कर व्यथा ही व्यथा को भोगता है। सामाजिक सांस्कृतिक समारोहों में सर्वहारा वर्ग का स्थान अंत में होता है।चुप हो कर सहना सर्वहारा वर्ग की नियति है। 'मुझे चाँद चाहिए' उपन्यास का चतुर्भुज इसका प्रमाण है। चतुर्भुज अपना नसीब आज़माने मुम्बई आया है। वह बेसहारा होने के कारण लोगों से अदब व प्यार से व्यवहार करता है। उपन्यास के नायक हर्ष को चतुर्भुज का व्यवहार कतई पसन्द नहीं। चतुर्भुज जब हर्ष को टोकता है तो चतुर्भुज बेबसी का परिचय देते हुए कहता हैः—'' हर्ष मै। यहां अपना फर्क जतलाने नहीं आया हूँ। अपने पाँवों पर खड़ा होने के लिए आया हूँ। तुम सामने वालों की बात बेबाकी से काट सकते हो क्योंकि तुम्हें अपने परिवार का सहारा है, मेरे पीछे कोई सहारा नहीं।'[23] चतुर्भुज के कथन में असुरक्षा व आश्रयहीनता का भाव झलकता है एवम् बेबसी व चालाकी भी अभिव्यक्ति का माध्यम ग्रहण करती है।

हिन्दी साहित्य के कथाकारों की सशक्त पीढ़ी में सुरेन्द्र वर्मा जी ने अपने रचना संसार को विविध विमर्शमूलक वैचारिक मन्थन से मथा है इसी कारण उपन्यास साहित्य के सन्दर्भ में सुरेन्द्र वर्मा जी का योगदान चिरस्मरणीय है जिन्होंने यथार्थधर्मिता के धरातल पर अपनी विचारधारा को पाठकों के समक्ष सम्प्रेषित किया है। विवेच्य उपन्यास में विभिन्न वर्ग, समाज, विषय, विचार चिन्तन व स्थिति को केन्द्र बिन्दु में रखकर उत्तर आधुनिक विमर्श, स्त्री विमर्श, विखंडन विमर्श, विघटन विमर्श, सैक्स विमर्श,सर्वहारा विमर्श के विभिन्न पहलुओं को रेखांकित किया है। रचनाकार अपने मन के भावनाओं, अनुभवों, विचारों के सामंजस्य से कृति की सृष्टि करता है ताकि पाठक वर्ग साहित्य के माध्यम से समाज से परिचित हो सके क्योंकि विमर्शमूलक वैचारिक चिन्तन से वैयक्तिक, सामाजिक, वैश्विक उन्नयन की दिशाएँ स्पष्ट हो जाती है व संवेदनशील पाठक जीवन विकास की दिशाओं में उत्कर्ष का रास्ता खोजने की दृष्टि भी प्राप्त कर सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. रामचंद्र वर्मा, मानक हिन्दी कोश, पृष्ठ 77।
2. नवल जी, नालन्दा विशाल शब्द सागर,, पृष्ठ 1276।
3. सत्य प्रकाश, बलभद्र प्रकाश, मानक हिन्दी अंग्रेजी कोश,, पृष्ठ 355।
4. अर्जुन चव्हाण, विमर्श के विविध आयाम,वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2008।
5. देवशंकर नवीन, उतर आधुनिकताः कुछ विचार, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 200
6. अर्जुन चव्हाण, विमर्श के विविध आयाम,वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2008।
7. सुरेन्द्र वर्मा, मुझे चाँद चाहिए, राधाकृष्ण प्रकाशन,नई दिल्ली, 1993,दसवीं आवृत्ति 2002, पृ 553।
8. वही पृ 557।
9. क्षमा शर्मा, स्त्रीत्ववादी विमर्शः समाज और साहित्य, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002
10. सुरेन्द्र वर्मा, मुझे चाँद चाहिए, राधाकृष्ण प्रकाशन,नई दिल्ली, 1993,दसवीं आवृत्ति 2002,पृ 48।
11. वही, पृ 163—164।
12. वही, पृ 555—556।
13. अर्जुन चव्हाण, विमर्श के विविध आयाम,वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2008।
14. सुरेन्द्र वर्मा, मुझे चाँद चाहिए, पृ 510।
15. नीरज जैन, व्यक्तित्व विघटन के विविध आयाम, नरेश प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2002।
16. सुरेन्द्र वर्मा, मुझे चाँद चाहिए, वही पृ 122।
17. वही, पृ 124
18. वही, पृ 124
19. गोपाल राय, हिन्दी उपन्यास का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2002।
20. सुरेन्द्र वर्मा, मुझे चाँद चाहिए, पृ 121।
21. वही पृ 120
22. अर्जुन चव्हाण, विमर्श के विविध आयाम,वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण : 2008।
23. सुरेन्द्र वर्मा, मुझे चाँद चाहिए, पृ 446।

Net Sources

1. yabaluri.org/.../postmodernliteratureoct...
2. http://en.wikipedia.org/wiki/Surendra_Verma
3. http://ek-shaam-mere-naam.blogspot.in/2008/04/blog-post_11.htmlhttp://
4. www.veethi.com/india-people/surendra_verma-profile-2890-25.htm
5. http://www.digplanet.com/wiki/Surendra_Verma